International Journal of Multidisciplinary Education and Research
www.educationjournal.in
ISSN: 2455-4588
Received: 10-07-2021, Accepted: 01-08-2021, Published: 17-08-2021
Volume 6, Issue 3, 2021, Page No. 37-39

स्वतन्त्रतापूर्व भारत में प्राथमिक शिक्षा का विकास

डॉ. सुभाष सिंह
एसोसिएट प्रोफेसर, शिक्षा शास्त्र, आर. आर. पी. जी. कालेज, अमेठी, उत्तर प्रदेश, भारत

सारांश
शिक्षा व्यक्ति, समाज और राष्ट्र के सर्वोन्मुखी विकास का प्रभावी उपकरण है। शिक्षा द्वारा मनुष्य अपने जीवनलक्ष्यों के ज्ञान और अधिगम में समर्थ होता है, परिवार का समुचित परिपालन करता है, समाज का उपयोगी सदस्य और राष्ट्र का जिम्मेदार नागरिक बनता है। भारत वर्ष में प्राथमिक शिक्षा का इतिहास बहुत पुराना है। सुदूर अतीत में भारत की प्राथमिक शिक्षा व्यवस्था से शुरू करके इतिहास के विभिन्न चरणों में प्रचलित प्राथमिक शिक्षा पद्वतियों और आधुनिक समय में प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण के प्रयासों का संक्षिप्त विवरण इस पत्रक में प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

मूल शब्दः स्वतन्त्रतापूर्व, भारत, शिक्षा विकास

प्रस्तावना
प्राथमिक शिक्षा का अर्थ प्रथम या सबसे पहले प्राप्त होने वाली शिक्षा से लगाया जाता है। इसे आधार शिक्षा भी कहा जा सकता है क्योंकि यह आगे प्राप्त की जाने वाली शिक्षा की नींव या आधार होती है। इससे विद्यार्थियों की भाषा का विकास होता है, उनका समाजीकरण होता है, जिज्ञासा बढ़ती है और भावी शिक्षा का आधार तैयार होता है। जनवरी, 1960 में यूनेस्को के एशियाई सदस्य देशों के शिक्षा प्रतिनिधियों की कराची (पाकिस्तान) में सम्पन्न बैठक में वर्ष 1980 तक सार्वभौमिक, निःशुल्क और अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा उपलब्ध करन के उपायों पर विचार किया गया। बैठक में उपस्थित प्रतिनिधियों ने प्राथमिक शिक्षा के व्यापक उद्देश्यों के निर्धारण और उनके कार्यान्वयन पर सहमति व्यक्त की। प्रतिनिधियों का मत था कि प्राथमिक शिक्षा को व्यक्तित्व विकास, वर्तमान तथा भावी चुनौतियों के प्रतिकार और वैश्विक आवश्यकताओं प्रर्ति में सक्षम बनाया जाना चाहिए।

प्राथमिक शिक्षा का उद्देश्य
नवम्बर, सन् 2000 में राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद (एन0सी0ई0आर0टी0) द्वारा प्रकाशित राष्ट्रीय पाठ्यचर्या संरचना में भारतीय परिस्थितियों के अनुकूल प्राथमिक शिक्षा के लिए उद्देश्यों की सूची दी गयी है, जो इस प्रकार है–

- बालकों को उनकी मातृभाषा और उनके प्राकृतिक एवं सामाजिक पर्यावरण का ज्ञान कराना।
- बालकों में समूह भावना विकसित करना और उन्हें वर्गभेद से ऊपर उठकर समरस जीवन की कला में निपुण करना।
- बालकों को स्वास्थ्य के नियमों से परिचित कराना और स्वास्थ्यवर्धक क्रियाओं में प्रशिक्षित करना।
- बालकों को सांस्कृतिक गतिविधियों जैसे उत्सव, त्यौहार और पारिवारिक तथा सामाजिक समारोहों में बेझिझक भाग लेने के लिए तत्पर करना।
- बालकों में एक–दूसरे के प्रति प्रेम , सहानुभूति और सम्मान के भाव जागृत करना और मिल–जुलकर कार्य करने की ओर उन्मुख करना।
- बालकों को एक–दूसरे की भाषा ,जीवन शैली, धार्मिक विशेषताओं और अन्य भिन्नताओं के प्रति सहिष्णु बनाना।

भारत में प्राथमिक शिक्षाः 1947 तक
भारत में शिक्षा कभी भी बाहरी या अपरिचित गतिविधि नहीं रही। यहॉ शिक्षा का इतिहास उतना ही पुराना है जितना समाज के संगठन का। भारतवर्ष में संकलित वैदिक संहिताओं को विश्व के प्रथम काव्य होने का गौरव प्राप्त है। वेद और वैदिक काव्य, भाषा,व्याकरणिक संरचना, ज्ञान–विज्ञान और व्यावहारिकता की दृष्टि से आज भी समसामयिक हैं। इससे सिद्ध है कि भारत में ज्ञान की परम्परा अनादिकाल से प्रचलित है। ज्ञान के अधिगम और अभ्यास की गतिविधि परिवार में ही आरम्भ हो जाती थी। इसे प्राथमिक शिक्षा का प्राचीनतम रूप कहा जा सकता है। इतिहास के विभिन्न काल खण्डा में प्राथमिक शिक्षा का स्वरूप बदलता रहा, जो इस प्रकार है–

वैदिक काल में प्राथमिक शिक्षा
वैदिक काल (2500 ई0पू0 से 500 ई0पू0) में माता को पहला और पिता को दूसरा गुरू माना जाता था। माता सामान्य व्यवहार और पिता परिवार की ज्ञान परम्परा में बालक को दीक्षित करते थे। प्रायः पॉच वर्ष की अवस्था में सन्तान का विद्यारम्भ संस्कार होता था। जिसके बाद पिता बालक को भाषा, व्याकरण, संहिता, नैतिक मूल्यों और उपयोगी संस्कारों का ज्ञान और अभ्यास कराता था। यह शिक्षा संस्कृत भाषा के माध्यम से प्रदान की जाती थी। प्राथमिक ज्ञान में प्रवीण हो जाने पर लगभग आठ वर्ष की अवस्था में बालकों का उपनयन संस्कार होता था और उन्हें गुरूकुल में अध्ययन के लिए भेंज दिया जाता था। गुरूकुलों में वैदिक संहिताओं,उपनिषदों,स्मृतियों,योग,संगीत व कलाओं का ज्ञान और अभ्यास कराया जाता था।

बौद्ध काल में प्राथमिक शिक्षा
बौद्ध काल (500ई0पू0 से 1200ई0) में उद्देश्य और पाठ्यक्रम की दृष्टि से प्राथमिक शिक्षा का स्वरूप ज्यादा स्पष्ट हुआ। इस दौरान प्राथमिक शिक्षा का नियोजन और संचालन पिता या परिवार के स्थान पर बौद्ध संघों के हाथ में आ गया। शिक्षा का आरम्भ *पवज्जा* नामक संस्कार से होता था। इस काल में प्राथमिक शिक्षा को सर्वसुलभ अर्थात समाज के सभी वर्गों के लिए प्राप्त बनाया गया। बौद्ध काल की प्राथमिक शिक्षा में अक्षरज्ञान, शब्द ज्ञान, भाषा, शिल्प और कलाओं का सामान्य ज्ञान पर जोर था। शिक्षा का माध्यम पाली और प्राकृत था।

मध्य काल में प्राथमिक शिक्षा

मध्यकाल या मुस्लिम काल (सन् 1200 ई0 से सन् 1700 ई0) में प्राथमिक शिक्षा के लिए विशेष संस्थाओं की व्यवस्था हुई, जिन्हें मकतब कहा जाता था। भारत में मुस्लिम शासन के प्रसार के साथ ही जगह–जगह मस्जिदों की स्थापना हुई, जिनमें प्राथमिक शिक्षा केन्द्रों यानि मकतबों की व्यवस्था की गयी। प्राथमिक शिक्षा का आरम्भ चार वर्ष, चार माह और चार दिन की अवस्था में बिस्मिल्लाह खानी नाम की रस्म के साथ होता था। इस अवसर पर उस्ताद (गुरू/शिक्षक) बालक को कुरान शरीफ की चुनिन्दा आयतों या बिस्मिल्लाह शब्द का उच्चारण कराते थे। इसके बाद मकतब में लिपिज्ञान, लिखना, पढ़ना, अंकगणित और शिष्टाचार की शिक्षा प्रदान की जाती थी। शिक्षा का माध्यम अरबी और फारसी था। नैतिक विकास के लिए शेरदादी की पुस्तकें, गुलिस्तां और बोस्तां पढ़ाये जाने का प्रचलन था।

प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में पाश्चात्य प्रयास

सन् 1498 में पुर्तगाली नाविक वास्कोडिगामा ने यूरोप और भारत के बीच समुद्री मार्ग की खोज की। इसके बाद सन् 1510 में पुर्तगालियों ने गोआ पर अधिकार किया और व्यापारिक तथा शैक्षिक गतिविधियों की शुरूआत की। उन्होंने गोआ, दमन, दीव, हुगली, कोचीन, चटगॉव और मुम्बई में प्राथमिक विद्यालयों की स्थापना की । इन विद्यालया में स्थानीय भाषा के साथ पुर्तगाली भाषा, गणित और स्थानीय शिल्पों की शिक्षा की व्यवस्था की गयी। पुर्तगालियों को भारत में पश्चिमी शिक्षा प्रणाली का संस्थापक माना जाता है।

पुर्तगालियों के बाद सत्रहवीं शताब्दी के मध्य में डच व्यापारियों ने भारत में प्रवेश किया। उन्होंने बंगाल के चिनसुरा व हुगली और पद्रास के नागपट्टनम और बिल्लीपट्टनम में अपने व्यापारिक केन्द्रों की स्थापना की। डच व्यापारिक केन्द्रों और कारखानों में काम करने वाले भारत और हॉलैण्ड के कर्मचारियों के लिए डच मिशनरियों ने प्राथमिक विद्यालय खोले। इन विद्यालयों में यूरोपीय पद्धति से बंगाल, तमिल और डच भाषाओं, भूगोल,गणित और सामान्य कलाओं के शिक्षण की व्यवस्था की गयी।

सन् 1667 में फ्रांसीसी ईस्ट इण्डिया कम्पनी को भारत में व्यापार की अनुमति मिली। उन्होंने मुख्य रूप से चन्द्रनगर और पाण्डिचेरी में अपने व्यापारिक केन्द्र खोले। इन केन्द्रों में फ्रेंच मिशनरियों ने प्राथमिक विद्यालयों की स्थापना की । इन विद्यालयों में फ्रेंच और भारतीय भाषाओं के माध्यम से गणित, सामान्य विज्ञान और कला कौशल की शिक्षा की व्यवस्था की गयी थी। सन् 1680 में डेनमार्क के व्यापारी और ईसाई मिशनरी भारत आये। उन्होंने सीरामपुर, त्रावणकोर, तंजोर और त्रिचरापल्ली में अपने कारखाने खोले और प्राथमिक स्कूलों की स्थापना की । इन विद्यालयों में तमिल भाषा के माध्यम से प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था थी। डेन प्राथमिक विद्यालयों में पारम्परिक विषयों के साथ गणित और उपयोगी उपयोगी कलाओं का परिचय कराया जाता था।

ऐतिहासिक साक्ष्यों के आधार पर कहा जा सकता है कि सन् 1613 में ब्रिटिश ईस्ट इण्डिया कम्पनी को तत्कालीन बादशाह जहॉगीर से भारत में व्यापार की अनुमति प्राप्त हुई। कम्पनी ने सूरत, बम्बई, कलकत्ता और मद्रास में अपने व्यापारिक केन्द्र खोले। कम्पनी के साथ आए मिशनरियों ने इन क्षेत्रों में प्राथमिक शिक्षा का दायित्व सॅभाला। 1668 में ब्रिटिश सरकार ने औपचारिक रूप से कम्पनी को विद्यालय खोलने की अनुमति प्रदान की। सन् 1757 के प्लासी और सन् 1764 के बक्सर युद्धों में विजय पाकर ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने बंगाल, बिहार और उड़ीसा में अपना शासन स्थापित कर लिया। इसके बाद इन क्षेत्रों की शिक्षा व्यवस्था कम्पनी सरकार के अन्तर्गत आ गयी। सरकार के सामने समस्या थी कि शिक्षा के परम्परागत रूप को जारी रखा जाय या इसमें पाश्चात्य पाठ्यक्रम के अनुरूप विषयों, शिक्षण पद्धति, अंग्रेजी भाषा और मूल्यांकन का समावेश किया जाय। धीरे–धीरे इस उलझन ने बृहत् रूप धारण कर लिया और अधिकारियों व शिक्षाविदों के दो वर्ग बन गये। एक तरफ पाश्चात्यवादियों का विचार था कि भारत में अंग्रेजी भाषा और ज्ञान–विज्ञान की शिक्षा की व्यवस्थाकी जाय ताकि सरकार को योग्य और कुशल कर्मचारियों के रूप में शिक्षा पर किए गए व्यय का प्रतिफल मिल सके। इसके दूसरी ओर प्राच्यवादियों के विचार में भारतीय सभ्यता और संस्कृति के संरक्षण के लिए परम्परागत शिक्षा व्यवस्था को बनाए रखना अनिवार्य था।

इस विवाद के समाधान का दायित्व सन् 1834 में गवर्नर जनरल की काउन्सिल के कानूनी सलाहकार और जन शिक्षा समिति के अध्यक्ष लॉर्ड थॉमस बेबिंगटन मैकाले को दिया गया। उसने फरवरी, सन् 1935 को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की जिसे " मैकाले मिनट्स " के नाम से जाना जाता है। इसी रिपोर्ट के आधार पर भारत में ब्रिटिश शिक्षा की नीति का निर्धरण हुआ। सन् 1654 में ब्रिटिश सरकार द्वारा जारी आज्ञापत्र में कम्पनी को सर्वसाधारण की शिक्षा के लिए प्रभावी कदम उठाने का निर्देश प्राप्त हुआ। इसके बाद क्षेत्रीय भाषाओं और अंग्रेजी माध्यम के सभी विद्यालयों को निश्चित शर्तो पर अनुदान दिया जाने लगा , जिससे प्राथमिक शिक्षा के प्रसार में तेजी आयी।

ब्रिटिश सरकार की प्राथमिक शिक्षा नीति और उसके प्रभाव

सन् 1857 के विद्रोह के बाद ईस्ट इण्डिया कम्पनी के स्थान पर सीधे ब्रिटिश सरकार ने भारत के शासन की बागडोर सॅभाल ली। सन् 1859 में तत्कालीन गवर्नर जनरल और वॉयसराय लॉर्ड केनिंग ने प्राथमिक शिक्षा के प्रसार के लिए धन की व्यवस्था करने हेतु विशेष कर आरोपित किया, लेकिन इससे विशेष लाभ नही हुआ। सन् 1882 में शिक्षा के क्षेत्र में सुधार के लिए सर विलियम हण्टर की अध्यक्षता में भारतीय शिक्षा आयोग की स्थापना हुई। इसकी सिफारिशों के आधार पर प्राथमिक शिक्षा का दायित्व स्थानीय निकायों को सौपा गया। इससे भारत में प्राथमिक विद्यालयों की संख्या में और पढ़ने वाले विद्यार्थियों की संख्याा में काफी वृद्धि हुई।

प्राथमिक शिक्षा के प्रसार अभियान में नया मोड़ तब आया जब सन् 1905 में बड़ौदा के राजा सियाजीराव गायकवाड़ ने अपने पूरे राज्य में प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य घोषित कर दिया। इससे प्रेरित होकर श्री गोपाल कृष्ण गोखले ने सन् 1910 में केन्द्रीय सभा में निःशुल्क एवं अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा सम्बन्धी प्रस्ताव और सन् 1911 में इसी सम्बन्ध में एक विधेयक पंस्तुत किया। इस विधेयक को कानूनी मान्यता न दिये जाने के विरोध में सारे भारत में अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा का अभियान शुरू हुआ , जिसे राष्ट्रीय शिक्षा आन्दोलन के नाम से जाना जता है। इस दौरान राजनीतिज्ञों, शिक्षाविदों और समाज सुधारकों ने प्राथमिक शिक्षा को निःशुल्क और अनिवार्य बनाने के लिए सरकार पर अनेक प्रकार से दबाव बढ़ाया। दूसरी ओर सरकार इस पर होने वाले व्यय से चिन्तित थी। इस बीच 20 दिसम्बर, सन् 1911 को ब्रिटिश सम्राट जॉर्ज पंचम भारत आए। उन्होंने प्राथमिक शिक्षा के व्यापक प्रसार के लिए प्रतिवर्ष 50 लाख रूपए अतिरिक्त व्यय करने का आदेश दिया।

ब्रिटिश सम्राट के आदेश पर ब्रिटिश सरकार ने सन् 1913 में नया शिक्षा प्रस्ताव प्रस्तुत किया ,जिसमें प्राथमिक शिक्षा पर सबसे ज्यादा व्यय करने , निर्धन और पिछड़े वर्गों को निःशुल्क प्राथमिक शिक्षा प्रदान करने ,देशी प्राथमिक शिक्षण संस्थाओं को अनुदान देने , प्राथमिक विद्यालयों में प्रशिक्षित शिक्षकों की नियुक्ति किये जाने , कक्षाओं में छात्र–शिक्षक अनुपात नियत करने और प्राथमिक शिक्षा का स्तर बढ़ाने के लिए विद्यालयों के नियमित निरीक्षण की व्यवस्था जैसे प्रावधान निहित थे। इन उपायों से सन् 1921 तक प्राथमिक विद्यालयों की संख्या–105017

और उनमें अध्ययनरत विद्यार्थियों की संख्या– 6109752 हो गयी। इतना होने के बावजूद भी 6–11 वर्ष की आयु के मात्र 25 प्रतिशत बालकों को ही प्राथमिक शिक्षा की सुविधा उपलब्ध थी। सन् 1929 में शिक्षा सम्बन्धी सहायक समिति के अध्यक्ष के रूप में सर फिलिप हर्टाग ने भारतीय शिक्षा परिदृश्य का अध्ययन किया और पाया कि शैक्षिक प्रसार में तेजी और अपव्यय व अवरोधन की दर में कमी लाए जाने की जरूरत है। इसके लिए उनका सुझाव था कि प्राथमिक विद्यालयों की संख्या में वृद्धि की जाए , उनमें प्रशिक्षित और प्रतिबद्ध शिक्षकों की नियुक्ति हो पाठ्यक्रम में उपयोगी व रूचिकर विषयों का समावेश किया जाए और विद्यालयों में पर्याप्त शिक्षण सामग्रियों की आपूर्ति सुनिश्चित की जाए। इसी के साथ उन्होंने प्राथमिक शिक्षकों की प्रशिक्षण सुविधओं के विस्तार और इन विद्यालयों को ग्राम सुधार और प्रौढ़ शिक्षा केन्द्रों के रूप में विकसित करने का भी सुझाव दिया।

ब्रिटिश सरकार द्वारा पारित भारत सरकार अधिनियम, सन् 1935 के प्रभाव से सन् 1937 में भारत में द्वैध शासन के स्थान पर स्वशासन पद्धति की स्थापना हुई। इससे प्रान्तीय सरकारों को अधिक स्वायत्तता मिली और शिक्षा में भारतीय विचारधारा को क्रियान्वित करना संभव हुआ। इस सम्बन्ध में नीति तय करने के लिए महात्मा गॉधी की प्रेरणा से अक्टूबर , सन् 1937 में वर्धा (महाराष्ट्र) में अखिल भारतीय राष्ट्रीय शिक्षा सम्मेलन का आयोजन हुआ। इसमें प्रान्तीय सरकारों के शिक्षा मन्त्रियों, विख्यात शिक्षाविदों और राष्ट्रीय नेताओं ने विचार व्यक्त किये। इनके आधार पर ही जाकिर हुसैन ने दिसम्बर, सन् 1937 और अप्रैल सन् 1938 में दो प्रतिवेदन प्रस्तुत किये। इनमें प्राथमिक शिक्षा के स्वरूप में आमूल परिवर्तन के लिए 7–14 वर्ष के बालकों को अनिवार्य एवं निःशुल्क शिक्षा उपलब्ध कराने , मातृभाषा को शिक्षण माध्यम बनाने, हस्तकौशल केन्द्रित पाठ्यक्रम, क्षेत्रीय आवश्यकताओं के अनुसार विषय चयन और विद्यालयों को स्वावलम्बी बनाने के सुझाव दिए गए। इस प्रकार की शिक्षा व्यवस्था को बुनियादी शिक्षा या बेसिक शिक्षा का नाम दिया गया। लेकिन प्रशिक्षित शिक्षकों की कमी और 1939 में विश्वयुद्ध के कारण इन प्रतिवेदनों का समुचित परिपालन नहीं हो सका। विश्वयुद्ध के बाद शिक्षा व्यवस्था को पटरी पर लाने के लिए केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार बोर्ड ने एक योजना प्रस्तुत की, जिसे इसके अध्यक्ष सर जॉन सार्जेण्ट के नाम पर " सार्जेण्ट योजना " कहा जाता है। इस योजना में बुनियादी शिक्षा के सिद्धान्तों को कुछ परिवर्तनों के साथ स्वीकार किया गया। इस योजना के कार्यान्वयन के लिए भारत में पहली बार पञ्च वर्षीय शिक्षा शिक्षा योजना का प्रावधान किया गया।

निष्कर्ष

भारत में ब्रिटिश सरकार का मुख्य उद्देश्य भारतीय संसाधनों के दोहन से आर्थिक समृद्धि और औद्योगिक विकास प्राप्त करना था। इसके लिए उन्हें कुशल और सस्ते श्रम की जरूरत थी। वे भारत में एक ऐसा अंगरेजी परस्त वर्ग तैयार करना चाहते थे ,जो उनकी कम्पनियों और फैक्टरियों में काम आ सके। इसके लिए अधोगामी निस्यन्दन सिद्धान्त के तहत समाज के उच्च वर्ग को मिशनरी और अंग्रेजी माध्यम विद्यालयों में उत्तम शिक्षा उपलब्ध थी। इसके अतिरिक्त भारत के जनसामान्य के लिए शिक्षा की व्यवस्था करना अंग्रेजों की प्राथमिकता में नहीं था। इसलिए तमाम समितियों और आयोगों द्वारा प्रस्तुत अनगिनत सिफारिशों और संस्तुतियों के होने पर भी भारत में प्राथमिक शिक्षा की स्थिति कमोबेश एक सी रही। सन् 1947 में भारत भर में प्राथमिक विद्यालयों की संख्या 1,34,866 और उनमें अध्ययनरत विद्यार्थियों की संख्या 1,05,25,493 थी।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. Ministry of Human Resource Development. National Policy on Education- 1986 (with Modifications Undertaken in 1992), MHRD Department of Education Delhi, 1992.
2. Ministry of Human Resource Development. National Policy on Education-1986, Programme of Action Revised 1992, Department of Education Delhi, 1994.
3. National Council of Education Research and Training. Education and National Development, Report of the Education Commission, 1964-66, 1(4).
4. गुप्ता, एस. पी. (1992): *भारतीय शिक्षा का इतिहास, विकास और समस्याएं,* शारदा पुस्तक भवन, इलाीाबाद।
5. सारस्वत,मालती एव गौतम,एस0एल0 (2000): *भारतीय शिक्षा का विकास एवं समसामयिक समस्याएं,* आलोक प्रकाशन, लखनऊ।
6. शुक्ला, सी0एस0 (2006): *भारत में शिक्षा प्रणाली का विकास,* इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ।
7. लाल,रमन बिहारी एवं शर्मा,कृष्ण कान्त (2012): *भारतीय शिक्षा का इतिहास, विकास एवं समस्याएं,* आर0लाल बुक डिपो, मेरठ।
8. भारत 2017 वार्षिक संदर्भ–ग्रन्थ न्यू मीडिया विंग द्वारा संकलित, प्रकाशन विभाग,सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार।